

वन्दौ धर्म-धर्म विस्तारा, वन्दौ शान्ति, शान्ति मनधारा ।
वन्दौ कुन्थु, कुन्थु रखवालं, वन्दौ अर अरि हर गुणमालं ॥
वन्दौ मल्लि काम मल चूरन, वन्दौ मुनिसुव्रत व्रत पूरन ।
वन्दौ नमि जिन नमित सुरासुर, वन्दौ पार्श्व-पास भ्रम जगहर ॥
बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखर सम्मेद महागिरि भू पर ।
एक बार वन्दै जो कोई, ताहि नरक पशुगति नहिं होई ॥
नरपति नृप सुर शक्र कहावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव पावै ।
विघन विनाशन मंगलकारी, गुण-विलास वन्दौ भवतारी ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा ।

(घत्ता)

जो तीरथ जावै, पाप मिटावै, ध्यावै गावै, भगति करै ।
ताको जस कहिये, संपति लहिये, गिरि के गुण को बुध उचरै ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

हे जिन तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी ॥टेक॥
दुर्जय मोह महाभट जाने, निज वश कीने हैं जग प्रानी ।
सो तुम ध्यान कृपान पान गहिं, तत् छिन ताकी थिति हानी ॥१॥
सुप्त अनादि अविद्या निद्रा, जिन जन निज सुधि बिसरानी ।
हवै सचेत तिन निज निधि पाई, श्रवण सुनी जब तुम वानी ॥२॥
मंगलमय तू जग में उत्तम, तू ही शरण शिवमग दानी ।
तुम पद सेवा परम औषधि, जन्म-जरा-मृत गद हानि ॥३॥
तुमरे पंचकल्याणक माहीं, त्रिभुवन मोह दशा हानी ।
विष्णु विदाम्बर जिष्णु दिगम्बर, बुध शिव कहि ध्यावत ध्यानी ॥४॥
सर्व दर्व गुण परिजय परिणति, तुम सुबोध में नहिं छानी ।
तातें 'दौल' दास उर आशा, प्रकट करी निज रस सानी ॥५॥